International Journal of Applied Research 2019; 5(10): 08-11

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(10): 08-11
www.allresearchjournal.com
Received: 07-08-2019
Accepted: 09-09-2019

विजयलक्ष्मी
संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली, भारत

Correspondence
विजयलक्ष्मी
संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली, भारत

उत्तररामचरित में वर्णविन्यासवक्रता

विजयलक्ष्मी

सार
वैचित्र्यपूर्ण कथन वक्ता के बौद्धिक विलास को प्रस्तुत करने के साथ ही श्रोता के मानस में आह्लाद विशेष को उत्पन्न करता है। अतः काव्यशास्त्रीय आचार्यों ने कथन वैचित्र्य का विविध प्रकार से समर्थन करते हुए उसे काव्य का शोभावर्धक तत्त्व स्वीकार किया है। आचार्य कुन्तक ने इसी तत्त्व का वक्रोक्ति रूप में वर्णन कर उसे काव्य का प्राणभूत माना है। उन्होंने वक्रोक्ति को व्यापक स्वरूप का प्रतिपादन कर उसके प्रमुख छः भेदों को वर्णित किया है। जिसमें काव्यशास्त्र के प्रायः सभी तत्त्व समाहित हो जाते हैं। इन्हीं में से वर्णों का विशिष्ट रूप से विन्यास अर्थात् वर्णविन्यास–वक्रता भी अन्यतम है। संस्कृत रूपकों में प्रमुख आचार्य भवभूति द्वारा विरचित करुण रस प्रधान नाटक उत्तररामचरित में वर्णविन्यासवक्रता का सम्पूर्ण स्वरूप स्पष्ट रूप से प्रतिभासित होता है। प्रस्तुत शोधपत्र में उत्तररामचरित में वर्णविन्यासवक्रता के स्वरूप को प्रस्तुत किया जा रहा है।

शब्द संकेत: वक्रोक्ति, कुन्तक, वर्णविन्यासवक्रता, उत्तररामचरित, भवभूति

प्रस्तावना
संस्कृत काव्यशास्त्र के आलोचना जगत् में समय–समय पर अनेक सिद्धान्त विकसित हुए। इन काव्यशास्त्रों के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि काव्य के सभी तत्त्वों का निदर्शन यथा–रस, अलङ्कार, रीति, ध्वनि, वक्रोक्ति एवं औचित्य का भिन्न–भिन्न आचार्यों ने स्वमेधानुसार अपने–अपने सिद्धान्तों में किया है। भरत से प्रारम्भ होकर यह परम्परा अद्यावधि निरन्तर प्रवहमान है।
वस्तुतः काव्य की आत्मा एवं प्राण के विषय में प्रायः आचार्यों में परस्पर वैमत्य रहा है। इसी आत्मतत्त्व व प्राणतत्त्व के अन्वेषण हेतु काव्यशास्त्र के छः सम्प्रदायों का आविर्भाव हुआ– रस सिद्धान्त, अलंकार सिद्धान्त, रीति सिद्धान्त, ध्वनि सिद्धान्त, वक्रोक्ति सिद्धान्त एवं औचित्य सिद्धान्त। इन छः सिद्धान्तों में वक्रोक्ति का भी अपना महत्त्व है। प्रायः समस्त आचार्यों ने भिन्न–भिन्न रूपों में वक्रोक्ति पर चर्चा की है, परन्तु काव्यजीवित के रूप में सर्वप्रथम आचार्य कुन्तक ने ही वक्रोक्ति को एक व्यवस्थित एवं मौलिक सिद्धान्त के रूप में प्रतिष्ठापित किया। उनकी वक्रोक्ति अलङ्कार–मात्र न होकर व्यापक है।
वस्तुतः वक्रोक्ति का निदर्शन भास, कालिदास आदि सभी कवियों के काव्य में परिलक्षित होता है। इसी क्रम में आचार्य भवभूति कृत रूपक उत्तररामचरित भी हमारे सम्मुख उपस्थापित होता है। संस्कृत नाट्य साहित्य में श्री रामचन्द्र के पावन चरित्र से सम्बद्ध अनेक नाटक हैं, किन्तु उनमें भवभूति का 'उत्तररामचरित' अपना एक वैशिष्ट्यपूर्ण स्थान रखता है। यह करुण रस प्रधान नाटक है। इसमें सात अङ्क है। नाटक में गर्भाङ्क की योजना करके यह नाटक सुखान्त बनाया गया है। जिसमें वक्रोक्ति का विशद प्रयोग हुआ है। वर्णविन्यासवक्रता का प्रयोग काव्य में दर्शनीय है।

कुन्तक द्वारा प्रतिपादित वक्रोक्ति का स्वरूप
वक्रोक्ति को काव्य के प्राण के रूप में प्रतिपादित करने वाले आचार्य कुन्तक ने काव्य की समालोचना के मार्ग में एक नवीन मार्ग का प्रवर्तन किया था। प्राचीन आचार्यों के मार्ग से कुछ भिन्न मार्ग का अवलम्बन करते हुये उन्होंने वक्रोक्ति को काव्य का प्राणभूत तत्त्व प्रतिपादित किया।

वक्रोक्ति का स्वरूप
कुन्तक के अनुसार दो प्रकार के मिथ्या तर्क वाले स्वच्छन्द प्रसङ्ग प्राप्त होते हैं। प्रथम तो वह जहाँ कवि तीनों लोकों के पदार्थों का उनके वास्तविक स्वरूप में वर्णन करता है, जैसे 'दैवरक्ता हि किंशुकाः' अर्थात् पलाश के पुष्प लाल होते हैं। इस प्रकार के आचार्यों को कुन्तक ने तत्त्ववादी अर्थात् स्वभावोक्तिवादी कहा है। द्वितीय जहाँ कवि स्वतन्त्रतानुसार यथा रुचि अपनी बुद्धि के अनुसार काव्य में पदार्थों का स्वरूप प्रतिपादित करता है, जैसे मनुष्यों के तीन नेत्र, चार हाथ इत्यादि।

इसे 'स्वच्छन्दतावाद' कहा जा सकता है। इन दोनों ही मार्गों का समन्वित मार्ग जो साहित्यार्थसुधा रूपी अमृत का सिन्धु हैं, उस मार्ग का कुन्तक ने वक्रोक्ति के रूप में प्रतिपादन किया है

उभावेतावलङ्कार्यौ तयोः पुनरलङ्कृतिः।
वक्रोक्तिरेव वैदग्ध्यभङ्गीभणितिरुच्यते।।[i]

अर्थात् ये दोनों शब्द और अर्थ अलङ्कार्य हैं तथा इन दोनों की अलङ्कृति वैदग्ध्य की शोभा से युक्त अर्थात् चातुर्यपूर्णकथन रूप वक्रोक्ति है। ये दोनों शब्द और अर्थ अलङ्करणीय हैं तथा इन्हें किसी अतिशय शोभाकारी अलङ्करण के साथ जोड़ना चाहिए। इन दोनों का अलङ्करण एक ही अलङ्कृति है, जिसे 'वक्रोक्ति' कहते हैं। यह वक्रोक्ति प्रसिद्धकथन से भिन्न अर्थात् अभिधा से विचित्र उक्ति है। वक्रोक्तिः– प्रसिद्धाभिधानव्यतिरेकिणी विचित्रैवाभिधा। कीदृशी वैदग्ध्यभङ्गीभणितिः? वैदग्ध्यं विदग्धभावः, कविकर्मकौशलं, तस्य भङ्गी विच्छित्तिः, तया भणितिः। विचित्रैवाभिधा वक्रोक्तिरित्युच्यते।[ii] दूसरे शब्दों में वैदग्ध्यपूर्ण शैली द्वारा कथन ही वक्रोक्ति है। वैदग्ध्य का आशय विदग्धभाव (चतुरता का भाव) से है। कवि के कर्म का कौशल उसकी शोभा होती है अर्थात् 'विदग्धभाव से युक्त कवि के कर्म के कौशल से जो अभिधा से विचित्र उक्ति कही जाती है, उसे वक्रोक्ति कहते हैं।' अब इसका तात्पर्य यह है कि शब्द और अर्थ पृथक–पृथक् अवस्थित होते हुए जब किसी भिन्न अलङ्करण (वक्रता के वैचित्र्य से युक्त कथन) से जोड़े जाते हैं, वह (वक्रता के वैचित्र्य से युक्त) कथन ही अतिशय शोभा का हेतु होता है।

वक्रोक्ति के प्रकार :– कुन्तक ने वक्रोक्ति के भेदों और प्रभेदों का विस्तृत एवं वैज्ञानिक रूप से विवेचन किया था। उन्होंने प्रतिपादित किया था कि काव्य के सभी तत्त्वों का सन्निवेश वक्रोक्ति के अन्तर्गत हो जाता है। कुन्तक के अनुसार वक्रता के मुख्य 6 भेद होते है–

कविव्यापारवक्रत्वप्रकाराः सम्भवन्ति षट्।
प्रत्येकं बहवो भेदास्तेषां विच्छित्तिशोभिनः।।[iii]

अर्थात् कविव्यापार की वक्रता के मुख्य रूप से छः प्रकार हो सकते हैं। उनमें से प्रत्येक भेद के वैचित्र्य की शोभा से युक्त होने से अनेक भेद हो सकते हैं। वक्रोक्ति के छः प्रकार निम्नलिखित हैं–(1) वर्णविन्यासवक्रता, (2) पदपूर्वार्द्धवक्रता, (3) प्रत्ययवक्रता, (4) वाक्यवक्रता, (5) प्रकरणवक्रता, (6)प्रबन्धवक्रता।।

वर्णविन्यासवक्रता

'वर्णों का विन्यास अर्थात् संयोजन वर्णविन्यास कहलाता है।'[iv] 'वक्रोक्तिजीवितकार कुन्तक के अनुसार इसका अभिप्राय अक्षरों के विशिष्ट प्रकार के निबन्धन से है।'[v] वर्गों की विशिष्ट प्रकार की रचना के वक्रत्व से आशय है कि प्रसिद्ध प्रस्थान से भिन्न वर्गों का विशिष्ट प्रकार का विन्यास जो शब्दशोभातिशय से युक्त होकर सहृदयों के लिए आह्लादकारी होता है, इसे ही 'वर्णविन्यासवक्रता' कहते हैं। सामान्यतः जिस प्रकार की वर्णयोजना होती है, उससे भिन्न एक विशेष प्रकार की वर्णयोजना के कारण शब्दशोभा में अतिशय उत्पन्न होता है। यह शब्दशोभातिशय ही 'वर्णविन्यासवक्रता' है। जैसे

प्रथममरुणच्छायस्तावत् ततः कनकप्रभः
तदनु विरहोत्ताम्यत्तन्वीकपोलतलद्युतिः।
प्रसरति ततो ध्वान्तक्षोदक्षमः क्षणदामुखे
सरसविसिनीकन्दच्छेदच्छविर्मृगलाञ्छनः।।[vi]

यहाँ पर 'तावत् ततः कनकप्रभः' में तकार एवं ककार की दूसरे चरण में 'विरहोत्ताम्यतन्वी' में तकार की 'कपोलतल' में लकार की, तीसरे चरण में 'ध्वान्तक्षोदक्षमः क्षणदामुखे' में क्ष संयुक्ताक्षर एवं दकार की तथा चतुर्थ चरण में 'सरसविसिनी' में सकार की 'कन्दच्छेदच्छविः' में च्छ संयुक्ताक्षर की आवृत्ति होने से पद्य में अपूर्व सौन्दर्य प्रतीत हो रहा है।
उक्त पद्य में स्पष्टतया कवि ने वर्णविन्यासवक्रता से उत्पन्न शब्दों की अतिशय शोभा का उन्मीलन किया है। यह वर्णविन्यासवक्रता अन्य आचार्यों का अनुप्रासालङ्कार है। आचार्य कुन्तक ने इस तथ्य को स्वयं स्पष्ट किया है. 'एतदेव वर्णविन्यासवक्रत्वं चिरन्तनेषु अनुप्रास इति प्रसिद्धम्'[vii]।

उत्तररामचरित में कुन्तक के अनुसार वर्णविन्यासवक्रता के छः मुख्य भेदों का विस्तृत विवेचन इस प्रकार है–

(1) एक वर्ण की स्वल्पान्तर से आवृत्ति

लीलोत्खातमृणालकाण्डकवलच्छेदेषु संपादिताः
पुष्यत्पुष्करवासितस्य पयसो गण्डूषसंक्रान्तयः।
सेक शीकरिणा करेण विहितः कामं विरामे पुन
र्यत्स्नेहारनरालनालनलिनीपत्रातपत्रं धृतम्।।[viii]

उक्त श्लोक में 'लीलोत्खात' में लकार की, 'काण्डकवलच्छेदेषु' में ककार की, द्वितीय चरण के 'पुष्यपुष्कार' में पकार एवं षकार की, तृतीय चरण में 'सेक शीकरिणा करेण' में ककार की एवं रेफ की, अन्तिम चरण में रेफ नकार की आवृत्ति होने से श्लोक में कुछ अपूर्व सौन्दर्य प्रतीत हो रहा है।

इदं कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमोवाकं प्रशास्महे।
वन्देमहि च तां वाचममृतामात्मनः कलाम्।।[ix]

प्रस्तुत पद्य में पूर्वार्ध में वकार की तथा उत्तरार्ध में मकार की अनेक बार आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ एक वर्ण की आवृत्ति रूप वर्णविन्यासवक्रता है।

ज्याजिह्वया
वलयितोत्कटकोटिदंष्ट्रमुद्गारिघोरघनघर्घरघोषमेतत्।
ग्रासप्रसक्तहसदन्तकवकनयन्त्रजृम्भाविडम्बिविकटोदरमस्तु
चापम्।।[x]

प्रस्तुत श्लोक के प्रथम चरण में जकार एवं टकार की द्वितीय चरण में धकार की तथा तृतीय चरण में सकार की अनेक बार आवृत्तिरूप वर्णविन्यासवक्रता है।

(2) दो वर्णों की स्वल्पान्तर से आवृत्ति

ते हि मन्ये महात्मानः कृतघ्नेन दुरात्मना।
मया गृहीतनामानः स्पृश्यन्त इव पाप्मना।।[xi]

प्रस्तुत पद्य में प्रथम चरण में महात्मानः दुरात्मना तथा द्वितीय चरण में 'गृहीतनामानः पाप्मना' शब्दों में दो वर्णों की आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ दो वर्णों की पुनः–पुनः आवृत्ति रूप द्वितीय प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

करपल्लवः स तस्याः सहसैव जडो जडात् परिभ्रष्टः।
परिकम्पिनः प्रकम्पी करान्मम स्विद्यतः स्निद्यन्।।[xii]

प्रस्तुत पद्य में 'जडो जडात्', 'परिकम्पिनः प्रकम्पी' 'स्विद्यतः स्निद्यन्' आदि शब्दों में व्यवधानरहित दो वर्णों की पुनः–पुनः आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ द्वितीय प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

अयं हि शिशुरेककको मदभरेण भूरिस्फुर–
त्वकरालकरकन्दलीकलितशत्रजालैर्बलैः।
क्वणित्कनककिङ्किणीझणझणायितस्यन्दनै
रमन्दमददुर्दिनद्विरदडामरैरावृतः।।[xiii]

प्रस्तुत श्लोक में 'करालकर' 'झणझणायित' 'मन्दमद' आदि शब्दों में दो वर्णों की आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ पर दो वर्णों की पुनः–पुनः आवृत्ति रूप द्वितीय प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

आगर्जगिरिकुञ्जकुञ्जरघटानिस्तीर्णकर्णज्वर
ज्यानिर्घोषममन्ददुन्दुभिरवैराध्मातमुज्जृम्भयन्।
वेलद्भैरवरुण्डखण्डनिकरैर्वीरो विधत्ते भुवं
तृष्यत्कालकरालवक्त्रविघसव्याकीर्यमाणामिव।।[xiv]

प्रस्तुत श्लोक में 'कालकराल' आदि शब्दों में दो वर्णों की आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ पर द्वितीय प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

(3) अनेक वर्णों की स्वल्पान्तर से आवृत्ति

त्वया जगन्ति पुण्यानि त्वय्यपुण्या जनोक्तयः।
नाथवन्तस्त्वया लोकास्त्वमनाथा विपत्स्यसे।[xv]

यहाँ प्रस्तुत श्लोक में 'त्वया जगति पुण्यानि त्वय्यपुण्या जनोक्तयः' 'नाथवन्तस्त्वया लोकास्त्वम्' आदि शब्दों में आवृत्ति हुई है। इसलिए यहाँ पर दो से अधिक वर्णों की पुनः–पुनः आवृत्ति रूप तृतीय प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

किमपि किमपि मन्दं मन्दमासत्तियोगा–
दविरलितकपोलं जल्पतोरक्रमेण।
अशिथिलपरिरम्भव्यापृतैकैकदोष्णो
रविदितगतयामा रात्रिरेव व्यरंसीत्।।[xvi]

प्रस्तुत पद्य में 'किमपि किमपि' एवं 'मन्दं मन्दम्' में अनेक वर्णों की आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ तृतीय प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

स्मरसि सुतनु! तस्मिन् पर्वते लक्ष्मणेन
प्रतिविहितसपर्यासुस्थयोस्तान्यहानि।
स्मरसि सरसनीरां तत्र गोदावरी वा
स्मरसि च तदुपान्तेष्वावयोर्वर्तनानि।।[xvii]

प्रस्तुत पद्य के तीनों चरणों में 'स्मरसि' पद का विन्यास हुआ है। इसलिए यहाँ अनेक वर्णों की आवृत्तिरूप वर्णविन्यासवक्रता है।

(4) स्पर्श वर्णों की वर्गान्त के साथ आवृत्ति

करपल्लवः स तस्याः सहसैव जडो जडात् परिभ्रष्टः।
परिकम्पिनः प्रकम्पी करान्मम स्विद्यतः स्विद्यन्।।[xviii]

प्रस्तुत श्लोक में 'परिम्पिनः प्रकम्पी करान्मम' शब्दों में स्पर्श वर्ण वर्गान्त–वर्ण के साथ संयुक्त रूप से प्रयुक्त हुए है। इसलिए यह चतुर्थ प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता का एक उदाहरण है।

कण्डूलद्विपगण्डपिण्डकषणाकम्पेन संपातिभिः
घर्मस्त्रंसितबन्धनैश्च कुसुमैरर्चन्ति गोदावरीम्।
छायापस्किरमाणविष्किरमुखव्याकृष्टकीटत्वचः
कूजत्क्लान्तकपोतकुक्कुटकुलाः कुले कुलायद्रुमाः।।[xix]

प्रस्तुत पद्य में 'कण्डूलद्विपगण्डपिण्ड' शब्दों में स्पर्श वर्ण वर्गान्त के साथ आवृत्त हुआ है। अतः यहाँ चतुर्थ प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

(5) त,ल,न आदि वर्णों की द्वित्व रूप में आवृत्ति

वेलोल्लोलक्षुभितकरुणोज्जृम्भणस्तम्भनार्थं
यो यो यत्नः कथमपि समाधीयते तं तमन्तः।
भित्त्वा भित्त्वा प्रसरति बलात्कोऽपि चेतोविकार–
स्तोयस्येवाप्रतिहतरयः सैकतं सेतुमोघः।।[xx]

प्रस्तुत श्लोक के प्रथम चरण में 'वेल्लोल्ल' में ल्ल संयुक्ताक्षर की एवं तृतीय चरण के 'भित्त्वा भित्त्वा' में त्त संयुक्ताक्षर की आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ पंचम प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

दह्यमानेन मनसा दैवाद् वत्सां विहाय सः।
लोकोत्तरेण सत्त्वेन प्रजापुण्यैश्च जीवति ।।[xxi]

प्रस्तुत पद्य के तृतीय चरण में 'त्त' संयुक्ताक्षर की आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ पंचम प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

(6) वर्णों की रेफादि से संयुक्त रूप में आवृत्ति

विनिश्चेतुं शक्यो न सुखमिति वा दुःखमिति वा
प्रमोहो निद्रा वा किमु विषविसर्पः किमु मदः।
तव स्पर्शे स्पर्शे मम हि परिमूढेन्द्रियगणो
विकारश्चैतन्यं भ्रमयति च सम्मीलयति च।।[xxii]

यहाँ प्रस्तुत श्लोक में 'विषविसर्पः स्पर्श स्पर्श' वर्गों में दो बार रेफ के संयोग का प्रयोग हुआ है। अतः यहाँ षष्ठ प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।

आगर्जगिरिकुञ्जकुञ्जरघटानिस्तीर्णकर्णज्वर
ज्यानिर्घोषममन्ददुन्दुभिरवैराध्मातमुज्जृम्भयन्।
वेल्लभैरवरुण्डखण्डनिकरैर्वीरो विधत्ते भुवं
तृष्यत्कालकरालवक्त्रविघसव्याकीर्यमाणामिव।।[xxiii]

प्रस्तुत श्लोक में 'आगर्ज', 'निस्तीर्णकर्ण', 'निर्घोष', 'व्याकीर्य' इत्यादि वर्गों में रेफ के संयोग का प्रयोग हुआ है। इसलिए यह षष्ठ प्रकार का वर्णविन्यासवक्रता की उदाहरण है।

त्वष्ट्रयन्त्रभ्रमिभ्रान्तमार्तण्डज्योतिरुज्ज्वलः।
पुटभेदो ललाटस्थनीललोहितचक्षुषः।।[xxiv]

प्रस्तुत पद्य में 'भ्रमिभ्रान्त' में भ वर्ण के साथ 'रेफ' के संयोग की आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ षष्ठ प्रकार की वर्णविन्यासवक्रता है।
इस प्रकार वर्णविन्यास के प्रायः सभी प्रसिद्ध प्रयोगों को कुन्तक ने अपनी वर्णविन्यासवक्रता के अन्तर्गत स्वीकार किया है। अन्य आचार्यों द्वारा प्रतिपादित अनुप्रास के समस्त भेद, वृत्तियाँ, गुण, यमक तथा यमकाभास आदि सभी का अन्तर्भाव इसमें हो जाता है। सभी आचार्यों ने अपने–अपने सिद्धान्त के अनुसार अनुप्रास आदि शब्दालङ्कारों तथा वृत्तियों के आश्रय से वर्णचमत्कार का विवेचन किया है। कुन्तक ने वर्णगत इसी समस्त सौन्दर्य को सर्वव्यापी वक्रोक्ति (वर्ण से प्रबन्धपर्यन्त) का प्रथम अङ्ग मानते

हुए वर्णविन्यास वक्रता के अन्तर्गत अपने सिद्धान्त के अनुकूल ही सर्वथा मौलिक रूप में वर्णित किया है।
भवभूति के रूपकों में कुन्तक द्वारा प्रतिपादित वर्णविन्यास के मुख्य छः भेद सुगमतया बहुलता से प्राप्त होते हैं।

---

[i] वक्रोक्तिजीवित. 1.10
[ii] वक्रोक्तिजीवित. 1.10 वृत्ति–भाग
[iii] वक्रोक्तिजीवित. 1.18
[iv] वक्रोक्तिजीवित. 1.19 वृत्ति भाग (वर्णानां विन्यासो वर्णविन्यास)
[v] वक्रोक्तिजीवित. 1.19 वृत्ति भाग (अक्षराणां विशिष्टन्यसनम्)
[vi] वक्रोक्तिजीवित. 1.41 उदा.
[vii] वक्रोक्तिजीवित. 1.40 वृत्ति भाग
[viii] उत्तररामचरित. 3.16
[ix] उत्तररामचरित. 3.16
[x] उत्तररामचरित. 4.29
[xi] उत्तररामचरित. 1.48
[xii] उत्तररामचरित. 3.41
[xiii] उत्तररामचरित. 5.5
[xiv] उत्तररामचरित. 5.6
[xv] उत्तररामचरित. 1.43
[xvi] उत्तररामचरित. 1.17
[xvii] उत्तररामचरित. 1.26
[xviii] उत्तररामचरित. 3.41
[xix] उत्तररामचरित. 2.9
[xx] उत्तररामचरित. 3.36
[xxi] उत्तररामचरित. 7.7
[xxii] उत्तररामचरित. 1.35
[xxiii] उत्तररामचरित. 5.6
[xxiv] उत्तररामचरित. 6.3

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. वक्रोक्तिजीवित, आचार्य कुन्तक, व्याख्याकार– आचार्य विश्वेश्वर सिद्धान्त शिरोमणि, हिन्दी अनुसन्धान परिषद्, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
2. वक्रोक्तिजीवित, राजानक कुन्तक सं.– सुशील कुमार डे, फर्मा के.एल. मुखोपाध्याय, कलकत्ता, 1961
3. उत्तररामचरित, भवभूति, संपा.– सी.एच. तावनेय, कलकत्ता, 1874
4. उत्तररामचरित भवभूति, संपा.– काशीनाथ पाण्डुरंग परब, निर्णयसागर, प्रेस मुम्बई, 1903